

DAILY **CURRENT AFFAIRS**

IN HINDI

SPECIAL FOR UPSC & GPSC EXAMINATION

DATE : 12-01-26



यूपीएससी सीएसई के लिए द हिंदू महत्वपूर्ण समाचार लेख और संपादकीय

सोमवार, 12 जनवरी, 2026

संस्करण : अंतर्राष्ट्रीय विषय-सूची

पेज 01 पाठ्यक्रम: जीएस II: शासन / प्रारंभिक परीक्षा	केंद्र ने फोन सोर्स कोड तक पहुंच की मांग की
पेज 06 पाठ्यक्रम: जीएस III: विज्ञान और प्रौद्योगिकी / प्रारंभिक परीक्षा	पीएसएलवी-सी62 मिशन के प्रक्षेपण की उल्टी गिनती शुरू
पेज 07 पाठ्यक्रम: जीएस III: पर्यावरण और पारिस्थितिकी / प्रारंभिक परीक्षा	ग्लोबल साउथ में संरक्षण प्रथाएं अधिकारों को कमजोर करती हैं: शोधकर्ता
पेज 10 पाठ्यक्रम: जीएस II: शासन / प्रारंभिक परीक्षा	क्या सहमति की उम्र कम की जानी चाहिए?
पेज 11 पाठ्यक्रम: जीएस III: भारतीय अर्थव्यवस्था / प्रारंभिक परीक्षा	भारत की समुद्री नीति: यह कैसे विकसित हुई है और आगे क्या है
पृष्ठ 08 : संपादकीय विश्लेषण सिलेबस : जीएस II : शासन	पॉक्सो मामलों के क्लीयरेंस नंबर और युवा प्रेम में तेजी से उचित नहीं है : पॉक्सो अधिनियम को किशोरों के खिलाफ माता-पिता को धक्का देने की अनुमति नहीं देनी चाहिए

केंद्र सरकार दूरसंचार सुरक्षा आश्वासन आवश्यकताओं (टीएसएआर) के एक नए सेट पर विचार कर रही है जो भारत में काम करने वाले स्मार्टफोन निर्माताओं पर कड़े साइबर सुरक्षा दायित्वों को लागू करेगा। इनमें डिवाइस सोर्स कोड तक पहुंच, भारतीय प्रयोगशालाओं में अनिवार्य भेद्यता विश्लेषण, समय-समय पर मैलवेयर स्कैनिंग और प्रमुख सॉफ्टवेयर अपडेट की अग्रिम सूचना शामिल है। इस प्रस्ताव ने गोपनीयता, बौद्धिक संपदा और व्यवहार्यता पर चिंताओं का हवाला देते हुए ऐप्पल और सैमसंग जैसी वैश्विक प्रौद्योगिकी फर्मों से मजबूत प्रतिरोध को जन्म दिया है।

Centre seeks access to phone source codes

Tech firms object to the proposed 'vulnerability analysis' standards proposed by the Union govt. | The Centre revoked an order mandating a cyber safety app, Sanchar Saathi, on phones last month | Apple declined Chinese attempts to access code; and U.S. law enforcement also tried and failed

Reuters
NEW DELHI

The Centre is considering legally imposing a set of requirements for smartphone makers in Indian markets as part of a raft of "security measures", prompting behind-the-scenes opposition from tech giants such as Apple and Samsung. Among the most sensitive requirements for "vulnerability analysis" in the new Indian Telecom Security Assurance Requirements, drafted in 2023, is access to source code – the underlying programming instructions that make phones work and closely guarded by the manufacturers.

This will be analysed and possibly tested at designated Indian labs, the documents show. Apple had declined China's request for its source code between 2014 and 2016, and U.S. law enforcement has also tried and failed to get it. The proposals require automatic and periodic malware scanning on phones and storing of records of a phone's activities in the device for at least one year. IT Ministry and tech executives are due to meet on Tuesday for more discussions, sources said. "Any legitimate concerns of the industry will be addressed with an open mind," IT Secretary S. Krishnan said, adding it

Surveillance tools

The Indian Telecom Security Assurance Requirements propose 83 security standards including source code disclosure for smartphone manufacturers in Indian markets



- Background permission restriction: Apps cannot access cameras, microphones or location services in the background when phones are inactive
- One-year log retention: Devices must store security audit logs for 12 months
- Periodic malware scanning: Phones must automatically scan and identify potentially harmful applications
- Informing govt. of major updates: Phone makers must notify a govt. body before releasing any major updates or security patches

Gray area: Tech companies say the proposal lacks any global precedent.

was "premature to read more into it". Tech companies have countered that the package of 83 security standards, which will include a requirement to alert the government to major software updates, lacks any global precedent and risks revealing proprietary details, according to four people familiar with the discussions and a Reuters review of confidential government and industry documents. Indian government requirements have irked technology firms before. Last month the Centre revoked an order mandating a state-run cyber safety app, Sanchar Saathi, on phones amid concerns over surveillance. The new proposal is part of Prime Minister Narendra Modi's efforts to boost security of user data as online fraud and data breaches increase in the world's second-largest smartphone market, with nearly 750 million phones. Manufacturers will also have to make software changes under the require-

ments to allow pre-installed apps to be uninstalled and to block apps from using cameras and microphones in the background to "avoid malicious usage". Device makers will have to inform the National Centre for Communication Security about major software updates and security patches before releasing them to users, and the centre will have the right to test them. Tech companies Apple, Samsung, Google, and Xiaomi, and the Manufacturers' Association for Information Technology (MAIT) did not respond to requests for comment. However, MAIT had asked the Ministry last week to drop the proposal, a source with direct knowledge said. "This [source code review and analysis] is not possible... due to secrecy and privacy," MAIT had said in a confidential document drafted in response to the government proposal, and seen by Reuters. "Major countries in the EU, North America, Australia, and Africa do not mandate these requirements." MAIT's document says regular malware scanning significantly drains a phone's battery and seeking government approval for software updates is "impractical" as they need to be issued promptly. "There is not enough room on device to store 1-year log events," MAIT said in the document.

पृष्ठभूमि और संदर्भ

- साइबर सुरक्षा और उपयोगकर्ता डेटा सुरक्षा को मजबूत करने के लिए भारत के व्यापक प्रयास के हिस्से के रूप में 2023 में मानकों का मसौदा तैयार किया गया था, खासकर बढ़ती ऑनलाइन धोखाधड़ी और डेटा उल्लंघनों के बीच।
- भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा स्मार्टफोन बाजार है, जिसमें लगभग 750 मिलियन उपकरण हैं, जो राष्ट्रीय सुरक्षा और उपभोक्ता संरक्षण हिस्सेदारी को बढ़ाते हैं।
- यह कदम पहले के घर्षण के बाद उठाया गया है, जिसमें सरकार के साइबर सुरक्षा ऐप संचार साथी को इंस्टॉल करने के लिए अब रद्द किए गए जनादेश भी शामिल हैं, जिसने निगरानी संबंधी चिंताओं को बढ़ा दिया था।

प्रस्ताव के प्रमुख प्रावधान

स्रोत कोड पहुंच और परीक्षण

- निर्माताओं को नामित भारतीय प्रयोगशालाओं में "भेद्यता विश्लेषण" के लिए मालिकाना स्रोत कोड तक पहुंच प्रदान करने की आवश्यकता होगी।

अनिवार्य मैलवेयर स्कैनिंग और डेटा प्रतिधारण

- स्वचालित और आवधिक मैलवेयर स्कैन, गतिविधि लॉग के साथ कम से कम एक वर्ष के लिए उपकरणों पर संग्रहीत किया जाता है।

सॉफ्टवेयर अपडेट की नियामक निगरानी

- प्रमुख अपडेट और सुरक्षा पैच के बारे में नेशनल सेंटर फॉर कम्युनिकेशन सिग्योरिटी को पूर्व सूचना, रिलीज से पहले उनका परीक्षण करने का अधिकार के साथ।

उन्नत उपयोगकर्ता नियंत्रण

- उपयोगकर्ताओं को दुरुपयोग को रोकने के लिए पहले से इंस्टॉल किए गए ऐप्स को अनइंस्टॉल करने और कैमरों और माइक्रोफोन तक पृष्ठभूमि पहुंच को अवरुद्ध करने की अनुमति देता है।

सरकार का तर्क

- राष्ट्रीय सुरक्षा: दुर्भावनापूर्ण अभिनेताओं, स्पाइवेयर या शत्रुतापूर्ण राज्य एजेंसियों द्वारा स्मार्टफोन के शोषण को रोकना।
- उपभोक्ता संरक्षण: साइबर धोखाधड़ी, डेटा चोरी और अनधिकृत निगरानी को कम करना।
- नियामक संप्रभुता: यह सुनिश्चित करना कि भारत में बेचे जाने वाले उपकरण केवल विदेशी आश्वासनों पर निर्भर रहने के बजाय घरेलू सुरक्षा मानकों का अनुपालन करते हैं।

उद्योग की चिंताएँ

- बौद्धिक संपदा जोखिम: स्रोत कोड एक मुख्य व्यापार रहस्य है; इसका प्रकटीकरण नवाचार और प्रतिस्पर्धात्मकता से समझौता कर सकता है।
- गोपनीयता और निगरानी भय: ऑन-डिवाइस लॉगिंग और स्कैनिंग उपयोगकर्ता की गोपनीयता का उल्लंघन कर सकती है।

परिचालन अव्यवहारिकता:

- पूर्व अनुमोदनों के कारण सुरक्षा पैच में देरी से भेद्यता विंडो बढ़ सकती है।
- नियमित मैलवेयर स्कैनिंग से बैटरी जीवन खत्म हो सकता है।
- भंडारण की कमी के कारण एक साल के लॉग का भंडारण तकनीकी रूप से असंभव हो सकता है।
- वैश्विक मिसाल का अभाव: उद्योग निकाय ध्यान दें कि यूरोपीय संघ, उत्तरी अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया में इसी तरह के जनादेश अनुपस्थित हैं।

तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य

- चीन ने पहले ऐप्पल के सोर्स कोड (2014-16) तक पहुंच की मांग की थी, लेकिन इसे अस्वीकार कर दिया गया था।
- संयुक्त राज्य अमेरिका के कानून प्रवर्तन भी इस तरह की पहुंच को मजबूर करने में विफल रहा है, जो एन्क्रिप्शन और मालिकाना सॉफ्टवेयर से समझौता करने के लिए वैश्विक अनिच्छा को दर्शाता है।
- अधिकांश लोकतंत्र प्रत्यक्ष स्रोत कोड एक्सेस के बजाय जोखिम-आधारित ऑडिट, प्रमाणन ढांचे और बाजार के बाद की निगरानी को पसंद करते हैं।

भारत के लिए निहितार्थ

- आर्थिक: भारत के इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण पारिस्थितिकी तंत्र में निवेश और नवाचार पर संभावित द्रुतशीतन प्रभाव।
- रणनीतिक: डिजिटल संप्रभुता और वैश्विक प्रौद्योगिकी आपूर्ति श्रृंखलाओं में एकीकरण के बीच तनाव।

- शासन: आनुपातिकता, उचित प्रक्रिया और नियामक शक्तियों के दुरुपयोग के खिलाफ सुरक्षा उपायों के बारे में सवाल उठाता है।

आगे की राह

- तृतीय-पक्ष ऑडिट, सैंडबॉक्स परीक्षण और बग बाउंटी प्रोग्राम जैसे कम से कम दखल देने वाले सुरक्षा मॉडल अपनाएं।
- गोपनीयता, पारदर्शिता और डेटा न्यूनीकरण के लिए मजबूत कानूनी सुरक्षा सुनिश्चित करें।
- नियामक अलगाव से बचने के लिए वैश्विक सर्वोत्तम प्रथाओं के साथ घरेलू मानकों को संरेखित करें।
- नवाचार के साथ सुरक्षा को संतुलित करने के लिए उद्योग और नागरिक समाज के साथ संरचित परामर्श को संस्थागत बनाना।

निष्कर्ष

प्रस्तावित दूरसंचार सुरक्षा मानक तेजी से डिजिटल होती अर्थव्यवस्था में साइबर सुरक्षा और उपयोगकर्ता सुरक्षा पर भारत की वैध चिंताओं को दर्शाते हैं। हालांकि, स्मार्टफोन स्रोत कोड और दखल देने वाली अनुपालन आवश्यकताओं तक पहुंच को अनिवार्य करने से गोपनीयता, बौद्धिक संपदा और व्यापार करने में आसानी का जोखिम होता है। नवाचार, विश्वास और लोकतांत्रिक मूल्यों के साथ राष्ट्रीय सुरक्षा अनिवार्यताओं को समेटने के लिए वैश्विक मानदंडों, तकनीकी व्यवहार्यता और मजबूत निगरानी पर आधारित एक कैलिब्रेटेड दृष्टिकोण आवश्यक होगा।

यूपीएससी प्रीलिम्स परीक्षा अभ्यास प्रश्न

प्रश्न: प्रस्तावित दूरसंचार सुरक्षा मानदंडों का प्राथमिक उद्देश्य संबोधित करना है:

- (a) दूरसंचार प्रचालकों की राजस्व हानि
- (b) बढ़ती ऑनलाइन धोखाधड़ी और डेटा उल्लंघन
- (c) वैश्विक तकनीकी फर्मों की एकाधिकार प्रथाएं
- (d) इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण में आयात निर्भरता

उत्तर : a)

यूपीएससी मुख्य परीक्षा अभ्यास प्रश्न

प्रश्न: भारत में गोपनीयता, संघीय शासन और व्यापार करने में आसानी पर मालिकाना स्रोत कोड तक सरकार द्वारा अनिवार्य पहुंच के निहितार्थों की जांच करें। (250 शब्द)

पृष्ठ 06 : जीएस III : विज्ञान और प्रौद्योगिकी / प्रारंभिक परीक्षा

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन द्वारा पीएसएलवी-सी62/ईओएस-एन1 मिशन की सफल उलटी गिनती और प्रक्षेपण की तैयारी भारत के अंतरिक्ष कार्यक्रम में एक और महत्वपूर्ण मील का पत्थर है। श्रीहरिकोटा से 105वें प्रक्षेपण के रूप में निर्धारित, यह मिशन पृथ्वी अवलोकन, रणनीतिक अंतरिक्ष परिसंपत्तियों और वाणिज्यिक उपग्रह प्रक्षेपण में भारत की बढ़ती क्षमता को रेखांकित करता है, साथ ही अंतरिक्ष पारिस्थितिकी तंत्र में निजी स्टार्ट-अप और शैक्षणिक संस्थानों की बढ़ती भागीदारी पर भी प्रकाश डालता है।

Countdown to launch of PSLV-C62 mission begins

The vehicle, carrying an earth observation satellite and 15 'co-passengers' developed by Indian and overseas customers, is set to lift off at 10.17 a.m today; it is the 105th launch from Sriharikota

The Hindu Bureau
BENGALURU

The 22.5-hour countdown to the launch of the Polar Satellite Launch Vehicle (PSLV), carrying an earth observation satellite and 15 co-passenger satellites, commenced at the Satish Dhawan Space Centre in Sriharikota on Sunday.

The Indian Space Research Organisation (ISRO) is scheduled to launch the PSLV-C62/EOS-N1 Mission at 10.17 a.m. on Monday from the first launch pad of the Satish Dhawan Space Centre. This will be the 105th launch from Sriharikota. It will also be the 64th flight of the Polar Satellite Launch Vehicle and the fifth mission of the PSLV-DL variant.

The 15 co-passenger satellites have been developed by start-ups and academic institutions from India and abroad. The EOS-N1 satellite is said to have been built for strategic purposes.

"It is a commercial mission of NewSpace India Limited (NSIL). EOS-N1 and 14 co-passenger satellites



The ISRO said that after the injection of EOS-N1 and 14 satellites, the PS4 stage will be re-started to de-boost and enter a re-entry trajectory, followed by KID Capsule separation. @isro/X

will be injected into a Sun Synchronous Orbit and KID Capsule into a re-entry trajectory," the ISRO said.

It added that after the injection of EOS-N1 and 14 satellites, the PS4 stage will be re-started to de-boost and enter a re-entry trajectory, followed by KID Capsule separation. "Both PS4 stage and KID Capsule will re-enter into Earth's Atmosphere and impact will

be in the South Pacific Ocean," the ISRO said.

The 15 co-passengers are: Theos-2 earth observation satellite built jointly by Thailand and the U.K.; CGUSAT by Dhruva Space (India); DSUSAT by Dhruva Space; MOI-1 by Dhruva Space and Takeme2Space (India); LACHIT by Dhruva Space and Don Bosco University (India); Thybolt-3 by Dhruva Space;

Munal by Nepal university Antharkshya Pratishtan (Nepal) and MEA, GoI; KID Capsule by Orbital Paradigm (Spain) and RIDE! (France); Edusat by AlltoSpace (Brazil); Uaisat by AlltoSpace; Galaxy Explorer by AlltoSpace; Orbital Temple by AlltoSpace; Aldebaran-1 by AlltoSpace; Sanskarsat by Laxman Gyanpith (India); and Ayul-Sat by OrbitAid (India).

मिशन की मुख्य विशेषताएं

लॉन्च व्हीकल और वेरिएंट:

- ध्रुवीय उपग्रह प्रक्षेपण यान की 64वीं उड़ान
- पीएसएलवी-डीएल (डुअल-स्ट्रैप-ऑन) संस्करण का 5 वां मिशन, तकनीकी परिपक्वता और विश्वसनीयता को दर्शाता है।

पेलोड संरचना:

- EOS-N1: एक रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण पृथ्वी अवलोकन उपग्रह, जो भारत की निगरानी और भू-स्थानिक खुफिया क्षमताओं को बढ़ाता है।
- 15 सह-यात्री उपग्रह: भारतीय और विदेशी स्टार्ट-अप, विश्वविद्यालयों और संस्थानों द्वारा विकसित, जो वैश्विक लघु-उपग्रह प्रक्षेपण केंद्र के रूप में भारत की भूमिका को प्रदर्शित करता है।

कक्षा और मिशन प्रोफ़ाइल:

- सन सिंक्रोनस ऑर्बिट (एसएसओ) में इंजेक्शन, लगातार पृथ्वी इमेजिंग और रिमोट सेंसिंग अनुप्रयोगों के लिए महत्वपूर्ण है।
- PS4 स्टेज री-स्टार्ट और डी-बूस्ट: दक्षिण प्रशांत महासागर में PS4 चरण और KID कैप्सूल का नियंत्रित पुनः प्रवेश अंतरिक्ष स्थिरता और कक्षीय मलबे के शमन पर इसरो के बढ़ते फोकस को दर्शाता है।

संस्थागत और वाणिज्यिक महत्व

- मिशन को न्यूस्पेस इंडिया लिमिटेड के माध्यम से व्यावसायिक रूप से निष्पादित किया जाता है, जो अंतरिक्ष क्षेत्र में परिचालन, नियामक और वाणिज्यिक भूमिकाओं को अलग करने की भारत की रणनीति को मजबूत करता है।
- ध्रुव स्पेस जैसे स्टार्ट-अप और अंतर्राष्ट्रीय सहयोगियों की भागीदारी अंतरिक्ष क्षेत्र के सुधारों (2020 के बाद) की सफलता को दर्शाती है, जिसने निजी खिलाड़ियों और विदेशी भागीदारी के लिए डोमेन खोल दिया।

रणनीतिक और विकासात्मक निहितार्थ

राष्ट्रीय सुरक्षा

- ईओएस-एन1 भारत की रणनीतिक पृथ्वी अवलोकन क्षमता को मजबूत करता है, सीमा प्रबंधन, समुद्री डोमेन जागरूकता और आपदा प्रतिक्रिया में सहायता करता है।

वाणिज्यिक अंतरिक्ष नेतृत्व

- मल्टी-सैटेलाइट राइडशेयर मिशन अंतरिक्ष में लागत प्रभावी और विश्वसनीय पहुंच प्रदान करके वैश्विक लॉन्च प्रदाताओं के खिलाफ भारत की प्रतिस्पर्धात्मकता को बढ़ाते हैं।

नवाचार और क्षमता निर्माण

- विश्वविद्यालयों और स्टार्ट-अप की भागीदारी उच्च प्रौद्योगिकी क्षेत्रों में स्वदेशी नवाचार, कौशल विकास और आत्मनिर्भर भारत को बढ़ावा देती है।

जिम्मेदार अंतरिक्ष संचालन

- PS4 डी-ऑर्बिटिंग और कैप्सूल री-एंट्री बाहरी अंतरिक्ष के जिम्मेदार और टिकाऊ उपयोग के उभरते मानदंडों के साथ संरेखित करते हैं।

निष्कर्ष

पीएसएलवी-सी62/ईओएस-एन1 मिशन भारत के अंतरिक्ष कार्यक्रम के उभरते चरित्र को दर्शाता है - मुख्य रूप से राज्य के नेतृत्व वाले वैज्ञानिक प्रयास से लेकर रणनीतिक-वाणिज्यिक-नवाचार संचालित पारिस्थितिकी तंत्र तक। राष्ट्रीय सुरक्षा उद्देश्यों, वाणिज्यिक प्रक्षेपण, निजी क्षेत्र की भागीदारी और स्थिरता उपायों के संयोजन से, भारत खुद को एक विश्वसनीय, जिम्मेदार और प्रतिस्पर्धी अंतरिक्ष शक्ति के रूप में स्थापित कर रहा है। यूपीएससी उम्मीदवारों के लिए, यह मिशन इस बात का स्पष्ट उदाहरण है कि कैसे अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी समकालीन भारत में सुरक्षा, अर्थव्यवस्था, कूटनीति और शासन के साथ प्रतिच्छेद करती है।

यूपीएससी प्रीलिम्स परीक्षा अभ्यास प्रश्न

प्रश्न : पृथ्वी अवलोकन उपग्रहों को सूर्य तुल्यकालिक कक्षा (एसएसओ) में रखने का प्राथमिक उद्देश्य है:

- (a) भूस्थैतिक संचार सेवाओं को सक्षम करना
- (b) इमेजिंग के लिए निरंतर स्थानीय सौर समय बनाए रखें
- (c) प्रक्षेपण लागत को काफी कम करना
- (d) उपग्रह का जीवनकाल बढ़ाना

उत्तर: b)

यूपीएससी मियां परीक्षा अभ्यास प्रश्न

प्रश्न : भारत के अंतरिक्ष प्रक्षेपण इसकी सॉफ्ट पावर और विज्ञान कूटनीति में कैसे योगदान देते हैं? हाल के उदाहरणों के साथ उदाहरण दें।

पृष्ठ 07 : जीएस III: पर्यावरण और पारिस्थितिकी / प्रारंभिक परीक्षा

नेचर में प्रकाशित एक हालिया लेख ने ग्लोबल साउथ में संरक्षण प्रथाओं की नैतिक नींव पर बहस को फिर से शुरू कर दिया है। ऐतिहासिक और समकालीन साक्ष्यों के आधार पर, शोधकर्ता – भारत के कई – तर्क देते हैं कि संरक्षण मॉडल मानवाधिकारों और आजीविका पर वन्यजीव संरक्षण को प्राथमिकता देकर स्वदेशी लोगों और स्थानीय समुदायों (आईपीएलसी) को हाशिए पर रखना जारी रखते हैं। अध्ययन इस बात पर प्रकाश डालता है कि कैसे "प्राचीन जंगल" के औपनिवेशिक युग के विचार अभी भी आधुनिक संरक्षण को आकार देते हैं, अक्सर सामाजिक न्याय और लोकतांत्रिक शासन को कमजोर करते हैं।

Conservation practices in the Global South undermine rights: researchers

In an article in *Nature*, a group of researchers, including many from India, has argued for greater rights, agency, and education among communities; as the late conservationist Madhav Gadgil put it, "Talk of many things, not just air and water and the bird that sings, but of men and money and economic reforms..."

Divya Gandhi

Exactly 20 years ago, forest rangers in Chitwan National Park in Nepal nabbed a farmer, Shikharam Chaudhary, who they believed helped his son bury, in his own backyard, a stolen rhino horn. The rangers interrogated him and waterboarded him in prison.

Days later, Chaudhary died. No horn was found. But the large and wealthy global conservation organisation World Wildlife Fund (WWF) curiously campaigned for the charges filed against the rangers to be dropped, and won. The story came to light in an investigation by *BuzzFeed News* in 2019.

But two decades after this murder, the colonial legacy in the world of conservation, of privileging individual wildlife over human well-being, endures in the Global South. One article in the latest edition of *Nature* suggests the marginalisation and "othering" – the treatment of people as "different", or creating an "us" versus "them" narrative – continues to affect indigenous people when conservation projects are concerned.

The discourse on racism in conservation was renewed by the Black Lives Matter protests of 2020. The authors of the paper, many of whom are Indian scientists, instead propose a framework for more "inclusive" conservation that supports the human rights of black, indigenous and people of colour (BIPOC) communities, and nature, by countering exclusion.

A great othering

The history of conservation has always been steeped in marginalisation, injustice and racism, said the paper: "Othering" in conservation has primarily occurred against BIPOC communities, and is exacerbated in the global south, where governance systems and the rule of law and protection of both individual and collective rights are often weaker."

The main players in this form of discrimination are the wealthy elite, multi-national corporations, and the inheritance of the colonial penchant for a "pristine" wilderness devoid of people.

Colonial rulers routinely forced indigenous peoples and communities out of protected areas. However, the paper said, although conservation "has evolved substantially to be more inclusive," the racist European colonial past has created a roadmap for continued marginalisation.

The scientists elaborate that the modern conservation movement began during the European colonial era in the



The colonial legacy in the world of conservation, of privileging individual wildlife over human well-being, endures in the Global South. M. SATHYAMOORTHY/THE HINDU

1800s, when indigenous people were portrayed as "uncivilised" and racially inferior. They rationalised the latter's extermination and the appropriation of their territories, especially in India and in African colonies. Today, "conservation campaigns and initiatives, particularly through campaigns aimed at the Western public, often value wild animals over BIPOC people," the paper added.

Games in India

In India, the British colonial administration created public works projects such as perennial irrigation and railways. But they also instituted mechanisms to displace local communities (for forestry, plantations, development and conservation) and created game reserves where the elite could hunt wildlife for sport.

The authors use the recent example of the tiger Avni, killed in 2018, to illustrate urban-rural divisions in conservation. There was intense public outrage. "Notably, little mention was made of the number, names or ages of the children left parentless following Avni's killing of at least 13 rural villagers," the authors added. Mumbai's animal lovers demanded "justice" for the tigress and her cubs, chanting "Avni's kids, nation's kids".

"Along with that, when these animals, elephants, wild pigs, crocodiles, have left forest areas or sanctuaries to raid crops or



Barely 200 years ago, the Nilgiris were completely managed by indigenous communities who today have almost no voice at all. They are marginalised on virtually every count

TARSHI THEKAERKA
The Shola Trust

kill people, either little has been done, or compensation has been limited," the paper's co-author Kartik Shanker, a professor at the Centre for Ecological Sciences, Indian Institute of Science, Bengaluru, told *The Hindu*.

Wildlife conservation in India is still dominated by the urban elite, by certain castes, with their privileged and often Western views of what conservation is, he added. This brings with it a combination of outdated notions of "pristine nature" and neoliberal views of monetising conservation, e.g., ecotourism for the rich, as well as animal rights-centric opposition to traditional forms of use that can benefit local communities.

In a 2014 report in *The Hindu*, this reporter found that between 2001 and 2011, 192 cases were registered against tribal communities living in and around Nagarhole National Park, violating the Forest Rights Act. The tribal people's

"offences" were "trespassing forest land" in which they had lived for generations, collecting honey and cultivating ginger in the forest.

Gadgil's paradigm shift

The new work argues for greater rights, agency, and education among communities. As the late peoples' conservationist and scholar Madhav Gadgil put it in his autobiography, "Talk of many things, not just air and water and the bird that sings, but of men and money and economic reforms..."

There have been many movements to make conservation more people-centric in India. Ashish Kothari's *Kalpavriksh*, Madhav Gadgil's work on *People's Biodiversity Registers*, and Keystone's work in the Nilgiris are some examples.

Most of the progress has been at the level of "ideas", another co-author, Tarshi Thekaekara, trustee of The Shola Trust, told *The Hindu*: "The concept of coexistence has become mainstream, even in India. Forest departments everywhere now use the language of coexistence, and there's a broad recognition that the old fortress conservation model is no longer viable."

But the prevailing notion of "a pristine wilderness without human occupation" casts local people "as enemies, rather than custodians of nature."

Indigenous peoples and local communities (IPLCs), on the contrary, can be "very effective stewards of nature." "Dehumanisation" is not limited to extreme events but is a "common everyday occurrence," present in many societies even today, the paper continued.

In Nagarhole, there are ongoing protests by the Jenu Kurubas. The Van Gujjars in the Himalayas continue to be dispossessed of their livelihoods and ways of life, Dr. Thekaekara said. "Almost everywhere you look, there are stories of dispossession."

The Nilgiris is a particularly stark example, he added: "Barely 200 years ago, this landscape was completely managed by indigenous communities who today have almost no voice at all. They are marginalised on virtually every count."

The historical legacy of conservation "cannot be easily undone," said the paper. Instead it proposes a four-step framework to address the disparity: engaging and supporting human rights, advocating for and making space for the agency of IPLCs, challenging the accepted norms of how we engage with people from BIPOC communities, and seeking out new educational opportunities for and from BIPOC communities.

divya.gandhi@thehindu.co.in

THE GIST

The death by torture of a Nepalese farmer, Shikharam Chaudhary, at the hands of forest guards created no ripples in the usual elite circles. Instead, WWF campaigned for charges to be dropped

"Othering" has primarily been against BIPOC communities. The main players are the wealthy elite, multi-national corporations, and the inheritance of the colonial penchant for a pristine wilderness devoid of people. Today conservation often values wild animals over people

When the tiger Avni was killed in 2018, there was intense public outrage. Little mention was made of Avni's killing of 13 villagers. Animal lovers chanted 'Avni's kids, nation's kids'

अध्ययन के मुख्य तर्क

संरक्षण में औपनिवेशिक विरासत

- आधुनिक संरक्षण यूरोपीय उपनिवेशवाद के दौरान उभरा, जब स्वदेशी समुदायों को "असभ्य" के रूप में चित्रित किया गया था और जंगलों और संरक्षित क्षेत्रों से बाहर रखा गया था।
- यह विरासत ग्लोबल साउथ में बनी हुई है, जहां शासन और कानूनी सुरक्षा अक्सर कमजोर होती है, जिससे संरक्षण के नाम पर जबरदस्ती की प्रथा संभव होती है।

'अन्य' और मानवाधिकारों का उल्लंघन

- संरक्षण ने ऐतिहासिक रूप से काले, स्वदेशी और रंग के लोगों (बीआईपीओसी) समुदायों को "अन्य" किया है, जिससे "हम बनाम वे" कथा बन गई है।
- नेपाल के चितवन राष्ट्रीय उद्यान का उदाहरण, जिसमें हिरासत में हिंसा और विश्व वन्यजीव कोष की भूमिका शामिल है, यह दर्शाता है कि कैसे वैश्विक संरक्षण संगठनों ने कभी-कभी समुदायों के बजाय दुर्व्यवहार को बचाया है।

भारतीय संदर्भ: अभिजात वर्ग-संचालित संरक्षण

- भारत में, संरक्षण शहरी, अभिजात वर्ग और अक्सर उच्च जाति के दृष्टिकोणों का प्रभुत्व बना हुआ है, जो वन्यजीव संरक्षण की पश्चिमी धारणाओं से प्रभावित है।
- नागरहोल राष्ट्रीय उद्यान के आसपास विस्थापन और अवनी बाधित प्रकरण जैसे मामलों से पता चलता है कि शहरी-ग्रामीण विभाजन और वन्यजीव संरक्षण की मानवीय लागतों पर अपर्याप्त ध्यान दिया गया है।

मानव-वन्यजीव संघर्ष और आजीविका का नुकसान

- फसलों पर छापे, जीवन की हानि और सीमित मुआवजे तंत्र ने वन-निर्भर समुदायों के बीच असंतोष को गहरा कर दिया है।
- वन अधिकार अधिनियम, 2006 जैसे कानूनी सुरक्षा उपायों के बावजूद आईपीएल द्वारा पारंपरिक और टिकाऊ संसाधन उपयोग को अक्सर अपराध माना जाता है।

वैकल्पिक दृष्टि: जन-केंद्रित संरक्षण

- यह पेपर दिवंगत संरक्षणवादी माधव गाडगिल के विचारों को प्रतिध्वनित करता है, जिन्होंने सामाजिक न्याय, आजीविका और लोकतांत्रिक भागीदारी के साथ पारिस्थितिकी को एकीकृत करने पर जोर दिया था।
- पीपुल्स बायोडायवर्सिटी रजिस्टर और समुदाय के नेतृत्व वाले संरक्षण प्रयासों जैसी भारतीय पहल किले के संरक्षण के लिए व्यवहार्य विकल्प प्रदर्शित करती हैं।

शोधकर्ताओं द्वारा प्रस्तावित ढांचा

- अध्ययन चार-आयामी दृष्टिकोण का सुझाव देता है:
- संरक्षण नीति और व्यवहार में मानवाधिकारों को शामिल करना।
- आईपीएल की एजेंसी को बढ़ाना, उन्हें खतरों के बजाय संरक्षक के रूप में मान्यता देना।
- वैश्विक संरक्षण प्रवचन में प्रमुख मानदंडों और शक्ति संरचनाओं को चुनौती देना।
- समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देना, स्वदेशी समुदायों के लिए और उनसे सीखने को सक्षम बनाना।

निष्कर्ष

प्रकृति लेख इस बात पर जोर देता है कि सामाजिक न्याय से अलग संरक्षण न तो नैतिक है और न ही टिकाऊ है। ग्लोबल साउथ में और विशेष रूप से भारत में प्रभावी संरक्षण को औपनिवेशिक युग, बहिष्करण मॉडल से आगे बढ़कर समावेशी, अधिकार-आधारित और समुदाय-आधारित दृष्टिकोण की ओर बढ़ना चाहिए। स्वदेशी लोगों को बाधाओं के बजाय संरक्षण में भागीदारों के रूप में पहचानना न केवल जैव विविधता की रक्षा के लिए बल्कि संवैधानिक मूल्यों, मानवीय गरिमा और दीर्घकालिक पारिस्थितिक लचीलेपन को बनाए रखने के लिए भी आवश्यक है।

यूपीएससी प्रीलिम्स परीक्षा अभ्यास प्रश्न

प्रश्न: "किले का संरक्षण" शब्द, जिसका उपयोग अक्सर पर्यावरण प्रवचन में किया जाता है, इसका तात्पर्य है:

- (a) सेना के नेतृत्व वाले वन संरक्षण के माध्यम से संरक्षण
- (b) वन्यजीव-संरक्षित क्षेत्रों से मनुष्यों का पूर्ण बहिष्कार
- (c) शहरी नेतृत्व वाले वन्यजीव संरक्षण मॉडल
- (d) वैश्विक गैर-सरकारी संगठनों द्वारा वित्तपोषित संरक्षण

उत्तर : b)

यूपीएससी मुख्य परीक्षा अभ्यास प्रश्न

प्रश्न: "किले के संरक्षण" का क्या अर्थ है? भारत जैसे देशों में इस मॉडल को तेजी से अस्थिर क्यों माना जा रहा है? विकल्प सुझाएं। (150 शब्द)

सहमति से किशोर संबंधों से जुड़े मामलों में यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम, 2012 (POCSO) के दुरुपयोग पर भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा हाल ही में न्यायिक टिप्पणियों के बाद भारत की सहमति की उम्र कम करनी चाहिए या नहीं, इस पर बहस फिर से शुरू हो गई है। POCSO मामलों में तेज वृद्धि के साथ, जहां 16-18 वर्ष की आयु के नाबालिग रोमांटिक रिश्तों में शामिल हैं, यह मुद्दा किशोर स्वायत्तता और बच्चों को यौन शोषण से बचाने के लिए राज्य के कर्तव्य के बीच एक मौलिक तनाव को उजागर करता है।

Should the age of consent be lowered?

While some argue that the current law criminalises consensual relationships among adolescents, others warn that lowering the age could undermine protections against child exploitation. This debate comes amid rising POCSO cases, highlighting a growing conflict between adolescent autonomy and the need to safeguard vulnerable minors

LETTER & SPIRIT
Kartikey Singh
On January 10, the Supreme Court (SC), in its judgment in the *State of Uttar Pradesh versus Anuruddh & Anr.*, acknowledged the growing misuse of the Protection of Children from Sexual Offences Act (POCSO), 2012 in consensual, romantic adolescent relationships, where one party is a minor. It urged the Union government to initiate corrective measures to exempt genuine adolescent relationships from the special child protection law's rigorous application. This has revived the debate on the 'age of consent'.

The legal framework
The age of consent refers to the legally defined age at which an individual can consent to sexual activity. In India, it is currently 18 years, as established by the gender-neutral POCSO Act. Anyone below this age is classified as a "child", making their consent to sexual acts legally irrelevant. Consequently, sexual acts with minors are treated as "statutory rape", based on the legal presumption that children lack the capacity to give valid consent. Section 19 of the POCSO Act mandates that any person who suspects or has knowledge of an offence under the Act, whether likely to occur or already committed, must report it to the local police or the Special Juvenile Police Unit. The 18-year threshold was firmly cemented in the broader criminal law framework by the Criminal Law (Amendment) Act, 2013. This Act notably amended, among others, Section 375 of the Indian Penal Code (IPC), which defines 'rape' and, until 2012, had set the 'age of consent' at 16 years. The amendments, aimed at strengthening laws related to sexual offences against women, aligned IPC's Section 375 with the 18-year age stipulated in POCSO, thereby ensuring comprehensive protection against child sexual abuse. The Bharatiya Nyaya Sanhita (BNS), 2023, retained this position: Section 63 defines rape to include sexual acts with or without consent if the woman is under 18. Historically, India's age of consent has evolved significantly – from 10 years under the 1860 IPC to 12 (Age of Consent Act, 1891), then 14, and subsequently 16 until POCSO raised it to 18 in 2012. Importantly, the age of consent is distinct from the 'minimum age of marriage', which under the Prohibition of Child Marriage Act, 2006, is 18 for females and 21 for males.

Arguments in favour
In recent years, the debate over the age of consent has intensified, particularly due to a surge in POCSO cases involving adolescents aged 16-18, where the girl often testifies to 'consensual sex'. Advocates for lowering the age of consent argue that the current law fails to recognise adolescent sexuality, infringing on the autonomy of 16-18-year-olds capable of giving mature consent. Underlining the POCSO Act's intent, they emphasise that it was designed to prevent child sexual abuse, not to criminalise consensual romantic relationships among older adolescents. Reflecting the ground realities of 'adolescent sexual behaviour', the NFHS-4 (2015-16) shows that 11% of girls had their first sexual experience before age 15, and 39% before 18. An Enfold study analysing 7,064 POCSO judgments (2016-2020) across Assam, Maharashtra, and West



ISTOCKPHOTO

Bengal found that 24.3% of them involved romantic relationships, with 82% of victims in such cases refusing to testify against the accused. Another Enfold-Project 39A study of 264 cases under Section 6 (aggravated penetrative sexual assault) of POCSO in the same States found that 25.4% of them involved consensual relationships. Therefore, many advocate for a more nuanced legal approach, one that respects the consent of those over 16 while ensuring safeguards against coercion, exploitation, or abuse of authority. They call for shifting the conversation towards informed, open dialogue around sex education, relationships, and consent, rather than blanket criminalisation, which often leads to misuse. In many Western democracies, the consent age is 16, with safeguards against coercion and abuse. Countries like the U.K., Canada, and several EU nations recognise 'close-in-age' exemptions or the 'Romeo-Juliet clause', ensuring that teenagers in consensual relationships with slightly older peers are not criminalised.

The challenge
However, there are genuine concerns on reducing the age of consent. Many believe that such a move would risk weakening the deterrent framework, enabling trafficking and other forms of child abuse under the guise of consent. The current "bright-line rule" – which treats all individuals under 18 as incapable of consenting to sexual activity – reflects a clear legislative intent to create an unambiguous zone of protection for minors under the POCSO Act and BNS. This rule avoids subjective judgments by replacing them with an objective, consistent standard. Individuals against reducing the age of consent acknowledge that courts may exercise "guided judicial discretion" in isolated cases involving consensual adolescent relationships, but they caution against codifying such exceptions in law. More worryingly, child exploitation often occurs by individuals in positions of trust, such as family members, neighbours, teachers, and caregivers; a

2007 study by the Ministry of Women and Child Development found that over 50% of abusers were known to the child. In such cases, children often lack the emotional independence or capacity to resist or report abuse, making any claim of consent meaningless. Diluting the law would legitimise coercion, suppress disclosures, and contradict the constitutional and statutory commitment to protecting children's best interests. Lowering the age would also risk encouraging younger children to engage in sexual activity prematurely, without the emotional maturity to comprehend its ramifications. Parliament has consistently rejected proposals to lower the age of consent. The Justice Verma Committee had recommended keeping it at 16 under IPC Section 375, but Parliament chose to raise it to 18 in 2013, aligning with the POCSO framework. The 240th Report of the Parliamentary Standing Committee on Human Resource Development (2011) rejected recognising minor consent in the POCSO Bill, stating that willingness or maturity was legally irrelevant. Similarly, the 167th Report of the Parliamentary Standing Committee on Home Affairs (2012) supported raising the age to 18 and opposed any 'close-in-age' exemption. Most recently, the Law Commission's 283rd Report (2023) on the age of consent warned that reducing the age of consent would render POCSO a "paper law", undermining efforts to combat child marriage, prostitution, and trafficking.

Legal opinions
Time and again, courts have faced the tough task of upholding the letter of the law while recognising that its application, in some cases, can inflict real harm on those it seeks to protect. In *State versus Hitesh* (2025), the Delhi High Court (HC) held that "...societal and legal views on adolescent love should emphasise the rights of young individuals to engage in romantic relationships that are free from exploitation and abuse...". The law should evolve to acknowledge and respect these relationships, as long as they are consensual and free from coercion."

Similarly, the Bombay HC in *Ashik Ramjani Ansari versus State of Maharashtra* (2023) held that sexual autonomy includes both the 'right to engage' in consensual activity and the 'right to protection' from sexual aggression, and that recognising both is key to respecting human sexual dignity. However, in *Mohd. Rafiqat Ali versus State of Delhi*, the Delhi HC, asserted that "consent is legally immaterial" under POCSO if the victim is under 18. Most notably, on August 20, 2024, the Supreme Court overturned a controversial Calcutta HC ruling that acquitted a man in a POCSO case involving a 14-year-old girl, reaffirming that POCSO does not recognise 'consensual sex' with minors. Yet, later invoking Article 142 (extraordinary jurisdiction), the top court declined to impose a sentence despite conviction, noting the girl did not view the incident as a crime and had suffered more from the legal process than the act itself, but it also stated that the judgment should not be treated as precedent. More recently, on August 19, 2025, in a hearing of a case at the SC, Justice B.V. Nagarathna observed that romantic relationships between persons on the verge of majority age should be seen differently. "Look at the trauma the girl undergoes if she loves a boy and he is sent to jail, because her parents would file a POCSO case to cover the elopement", Justice Nagarathna observed.

The road ahead
While reducing the age of consent is within the jurisdiction of Parliament, the SC must step in to clarify the growing interpretational divide between the statutory framework and HC rulings, ensuring consistency for investigating agencies and lower courts alike. Moreover, laws alone cannot address the layered and complex realities of adolescent life. For real impact, we need a holistic approach with access to comprehensive sex education, respect for young people's autonomy, accessible sexual and reproductive health services, gender-sensitive and responsive law enforcement, and, above all, a social ecosystem that supports adolescents, especially girls, when they find themselves at odds with their families. Data from studies like Enfold paint a clear picture – there are too many cases, which stem from consensual romance, that are often weaponised by disapproving parents, which clog courts and erodes trust in the system without addressing root issues like poor sex education or cultural taboos around dating. The real challenge involves not merely analysing whether the age of consent should remain 18 or fall back to 16, but how the law can be recalibrated to distinguish genuine adolescent relationships from exploitative ones. A wholesale reduction risks diluting child protection, yet the current blanket rule unjustly criminalises young people navigating consensual intimacy. Instead of a blanket reduction that could open doors to predators disguising coercion as consent, we need a pragmatic tweak: introduce 'close-in-age' exemptions for 16-18-year-olds, say within a 3-4 year gap, coupled with mandatory judicial reviews to sniff out any foul play, while ramping up school programs on healthy relationships, consent, and emotional resilience. This way, we honour adolescent autonomy without gutting protections, and build a framework where kids learn to navigate love safely, reducing misuse of the law and fostering a more empathetic society. Kartikey Singh is a lawyer based in New Delhi.

THE GIST

- In recent years, the debate over the age of consent has intensified, particularly due to a surge in POCSO cases involving adolescents aged 16-18, where the girl often testifies to 'consensual sex'.
- An Enfold study analysing 7,064 POCSO judgments (2016-2020) across Assam, Maharashtra, and West Bengal found that 24.3% of them involved romantic relationships, with 82% of victims in such cases refusing to testify against the accused.
- However, there are genuine concerns on reducing the age of consent. Many believe that such a move would risk weakening the deterrent framework, enabling trafficking and other forms of child abuse under the guise of consent.

कानूनी और संवैधानिक संदर्भ

- भारत की सहमति की आयु 18 वर्ष है, जिससे नाबालिगों से जुड़ी कोई भी यौन गतिविधि कानूनी रूप से गैर-सहमति से होती है।
- इस स्थिति को आपराधिक कानून (संशोधन) अधिनियम, 2013 द्वारा मजबूत किया गया था और आपराधिक कानून को POCSO के बाल-संरक्षण ढांचे के साथ संरेखित करते हुए भारतीय न्याय संहिता, 2023 के तहत बरकरार रखा गया था।
- तर्क वैधानिक बलात्कार के सिद्धांत पर आधारित है, यह मानते हुए कि नाबालिगों में सहमति देने की कानूनी क्षमता का अभाव है, जिससे प्रवर्तन के लिए एक "उज्ज्वल-रेखा नियम" बनता है।

सहमति की आयु कम करने के पक्ष में तर्क

सहमति से किशोर संबंधों का अपराधीकरण

- अनुभवजन्य अध्ययनों से पता चलता है कि POCSO मामलों का एक महत्वपूर्ण अनुपात 16-18 वर्ष की आयु के किशोरों के बीच सहमति से रोमांटिक संबंधों से उत्पन्न होता है।
- इस तरह के मामलों में अक्सर युवा पुरुषों को कैद किया जाता है और लंबी कानूनी प्रक्रियाओं के माध्यम से किशोर लड़कियों को द्वितीयक उत्पीड़न किया जाता है।

किशोर स्वायत्तता की मान्यता

- अधिवक्ताओं का तर्क है कि 16 वर्ष से अधिक उम्र के किशोरों के पास रिश्तों के बारे में सूचित विकल्प बनाने के लिए पर्याप्त संज्ञानात्मक परिपक्वता होती है।
- वर्तमान कानून सामाजिक वास्तविकताओं और किशोर यौन व्यवहार की अनदेखी करता है, जैसा कि एनएफएचएस डेटा में परिलक्षित होता है।

तुलनात्मक अंतर्राष्ट्रीय अभ्यास

- कई लोकतंत्रों (उदाहरण के लिए, यूके, कनाडा, यूरोपीय संघ के राज्य) दुरुपयोग को रोकने के लिए 'क्लोज-इन-एज' या 'रोमियो-जूलियट' छूट के साथ सहमति की उम्र 16 वर्ष निर्धारित करते हैं।

न्यायिक चिंताएं

- उच्च न्यायालयों ने यौन स्वायत्तता और यौन कृत्यों को सहमति से किशोर अंतरंगता से अलग करने की आवश्यकता पर जोर दिया है, जो संवैधानिक नैतिकता को दर्शाता है।

सहमति की आयु कम करने के खिलाफ तर्क

बाल संरक्षण को कमजोर करने का जोखिम

- उम्र कम करने से तस्करी, संवारने और यौन शोषण के खिलाफ सुरक्षा उपायों को कमजोर किया जा सकता है, विशेष रूप से अधिकार या विश्वास के पदों पर बैठे व्यक्तियों द्वारा।

बच्चों की संरचनात्मक भेद्यता

- अध्ययनों से संकेत मिलता है कि बाल शोषण के अधिकांश मामलों में ज्ञात व्यक्ति शामिल होते हैं, जहां स्पष्ट "सहमति" जबरदस्ती या हेरफेर का परिणाम हो सकती है।

विधायी आशय और संसदीय ज्ञान

- संसद ने सहमति की आयु कम करने के प्रस्तावों को लगातार खारिज कर दिया है, परिपक्वता के व्यक्तिपरक आकलन पर बाल संरक्षण को प्राथमिकता दी है।
- विधि आयोग (283वीं रिपोर्ट, 2023) ने चेतावनी दी कि कमजोर पड़ने से POCSO अप्रभावी हो सकता है।
- स्पष्टता और प्रवर्तनीयता
- ब्राइट-लाइन नियम कानूनी निश्चितता सुनिश्चित करता है और कानून प्रवर्तन एजेंसियों द्वारा मनमाने या असंगत व्याख्याओं को रोकता है।

न्यायिक संतुलन अधिनियम

अदालतों ने सजा और व्याख्या में न्यायिक विवेक का प्रयोग करके सामाजिक वास्तविकताओं के साथ वैधानिक कठोरता को समेटने का प्रयास किया है, कभी-कभी "पूर्ण न्याय" करने के लिए अनुच्छेद 142 का आह्वान किया है। हालाँकि, इससे असंगति और अनिश्चितता भी पैदा हुई है, जो तदर्थ न्यायिक समाधानों के बजाय विधायी स्पष्टता की आवश्यकता को रेखांकित करती है।

आगे की राह

- कंबल में कमी के बजाय, विशेषज्ञों का सुझाव है कि 16-18 वर्ष की आयु के किशोरों के बीच सहमति से संबंधों के लिए संकीर्ण रूप से तैयार की गई 'क्लोज-इन-एज' छूट शुरू की जाए, जो सख्त न्यायिक जांच के अधीन है।
- मूल कारणों को दूर करने के लिए व्यापक यौन शिक्षा, किशोर-अनुकूल स्वास्थ्य सेवाओं और लिंग-संवेदनशील पुलिसिंग को मजबूत करना महत्वपूर्ण है।
- पुलिस और अभियोजकों के लिए स्पष्ट दिशानिर्देश POCSO के मूल सुरक्षात्मक इरादे को संरक्षित करते हुए दुरुपयोग को कम कर सकते हैं।

निष्कर्ष

सहमति की उम्र की बहस केवल एक कानूनी प्रश्न नहीं है, बल्कि बाल संरक्षण, संवैधानिक नैतिकता और किशोर स्वायत्तता को संतुलित करने के लिए भारत के संघर्ष का प्रतिबिंब है। सहमति की उम्र कम करने से कमजोर नाबालिगों को शोषण के लिए उजागर करने का जोखिम होता है, वर्तमान व्यापक अपराधीकरण अन्यायपूर्ण रूप से सहमति से किशोर संबंधों को दंडित करता है और न्याय प्रणाली में विश्वास को कमजोर करता है। एक एकमुश्त कमी के बजाय एक कैलिब्रेटेड, अधिकार-संवेदनशील सुधार, एक अधिक टिकाऊ मार्ग प्रदान करता है - जो युवा लोगों की गरिमा, एजेंसी और न्याय से इनकार किए बिना बच्चों की रक्षा करता है।

यूपीएससी प्रीलिम्स परीक्षा अभ्यास प्रश्न

प्रश्न : निम्नलिखित में से किस निकाय ने चेतावनी दी है कि सहमति की आयु कम करने से POC SO को "कागजी कानून" बना दिया जा सकता है?

- (a) न्यायमूर्ति वर्मा समिति
- (b) राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग
- (c) भारत का विधि आयोग
- (d) राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग

उत्तर: c)

यूपीएससी मुख्य परीक्षा अभ्यास प्रश्न

प्रश्न : सुप्रीम कोर्ट ने सहमति से किशोर संबंधों में पॉक्सो अधिनियम के दुरुपयोग को स्वीकार किया है। किशोर स्वायत्तता और बच्चों की सुरक्षा के लिए राज्य के दायित्व के बीच तनाव की गंभीर जांच करें। **(150 शब्द)**

पृष्ठ 11 : जीएस III : भारतीय अर्थव्यवस्था / प्रारंभिक परीक्षा

भारत की समुद्री नीति ऐतिहासिक रूप से व्यापार-संचालित दृष्टिकोण से एक व्यापक रणनीतिक, आर्थिक और सुरक्षा-उन्मुख ढांचे में विकसित हुई है, जो देश के भूगोल, इतिहास और बढ़ती वैश्विक महत्वाकांक्षाओं को दर्शाती है। जैसा कि अल्लूरी सुब्रमण्यम राजू और आर. श्रीनिवासन द्वारा संपादित द रूटलेज हैंडबुक ऑफ मैरीटाइम इंडिया में जांच की गई है, हिंद महासागर क्षेत्र (आईओआर) के साथ भारत का जुड़ाव इसकी राष्ट्रीय सुरक्षा, कूटनीति और विकास का केंद्र बन गया है। समुद्री शक्ति पर नए सिरे से जोर भारत के महाद्वीपीय मानसिकता से समुद्री-जागरूक शक्ति में परिवर्तन को रेखांकित करता है।

ABSTRACT



Strong traditions: INSV Kaurandya, the Indian Navy's stitched sailing vessel, built using ancient Indian techniques, embarks on its maiden voyage to Muscat, Oman, on December 25, 2025. (PI)

India's maritime policy: how it has evolved and what lies ahead

India's maritime policy has undergone significant evolution, intricately linked to its historical and geographical context, as explored in 'The Routledge Handbook of Maritime India'. The handbook delves into India's rich maritime history and strategic relationships across the Indian Ocean

Rajiv Bhatia

The two most prominent geographic features of the Indian subcontinent, with India at its centre, are the Himalayas and the Indian Ocean. They not only defined India's geographic boundaries but also shaped its history, culture, and civilisation. While foreigners came to India through the land route in the north to establish empires – some great and some not so great – in the south of the Vindhyas, where the presence of the sea is constant, Indians sailed east and west for trade, cultural exchange, and the occasional conquest.

In this broad historical context, a question arises – what is the significance of the maritime domain for India, as viewed through the lenses of history, strategy, economics, and technology? A comprehensive and scholarly work, *The Routledge Handbook of Maritime India*, edited by Alhaji Subramanyam Raju and R. Srinivasan, presents a multidimensional response to this fundamental question.

On maritime history

History has taught us the all-pervading significance of the maritime domain. The capabilities of Indian sailors to reach the far corners of the west and the east in ancient and medieval times is a source of pride and inspiration. As Jawaharlal Nehru observed, "History has shown that whatever power controls the Indian Ocean has, in the first instance, India's seaborne trade at her mercy, and, in the

second, India's very independence itself."

The first part of the handbook, comprising five essays by different scholars, traces the historical evolution of India's outward reach, focusing on the Cholas, the Marathas, Europeans and Indo-Arab maritime trade. Author N. Manoharan called the Cholas "The Nautical Tigers." The chapter on scholar-diplomat K. M. Panikkar critically analyses his ideas and establishes their continuing relevance to contemporary geopolitics. Varun Sahni, in his futuristic take, urges that the Indian Ocean needs to be viewed "less as a space – an ocean of transit – and more as a place – the home of a majority of the world's human population and settlements".

India's maritime strategy

Chapters in the book shed light on India's strategy and relations with multiple nations, including Australia, Japan, France, Pakistan, Bangladesh, Sri Lanka, the Maldives, Myanmar, Thailand, Indonesia, and China. India took the initiative to demarcate its maritime boundaries with all its neighbours and succeeded in every case, except Pakistan. The latter delayed a settlement based on "motivated assumptions." Huo Wenle's chapter on Sino-Indian maritime rivalry offers a deep dive into the thinking of Chinese and Indian scholars and recommends extensive discussions between the two governments to lay down the rules of engagement on the high seas. The aim should be to prevent "the clash of interests that are detrimental to both nations." Other chapters bring out

the reasons for the turnaround, in the mid-1980s, in India-Australia ties in the maritime domain; the essential similarities between India and Japan; and the rationale of the Indo-Pacific vision for India and France for maritime multilateralism.

In another cluster of four chapters, the book endeavours to analyse maritime institutions, connectivity, and governance of the following South Asian states – India, Bangladesh, Sri Lanka, and China. Zou Zhengxin presents a comparative analysis of the maritime security governance of India and China to bring out the risks of a "zero-sum game" evolving owing to the U.S. influence. He recommends joint consultative mechanisms to advance maritime development. R. Srinivasan's chapter on Sri Lanka demonstrates how "pitfalls" such as corruption, clan politics, and a lack of enlightened leadership drive nations to join China's Belt and Road Initiative (BRI), thereby undermining sound maritime governance.

Power projection

As per the handbook, India has been doing quite well in shaping its maritime power projection. In the first decade of this century, the Indian Navy played a stellar role in curbing piracy in the Arabian Sea. This marked the Navy's transformation from an observer into a net security provider. Two other chapters provide a critical analysis of ongoing geopolitical rivalries: one argues for "a hedging system" that considers the U.S. strategy for the Indo-Pacific, while

another advocates for increasing India's maritime presence, thereby creating a "political and economic confluence" of like-minded regional powers.

Other essayists have shed light on India's vision, strengths, and partnerships in the Indo-Pacific, a concept that has dominated strategic discourse over the past two decades. In recent years, its salience has been eroded somewhat by crises in other geographies (Ukraine, Gaza, Iran, Red Sea, and Venezuela) as well as by the new U.S. National Security Strategy (NSS) 2025, which takes a softer view of China as an economic competitor rather than as a geopolitical adversary. How India needs to refine its Indo-Pacific strategy in this context warrants a separate debate.

The final cluster of seven chapters addresses economic and technological developments in the maritime domain. A variety of topics, ranging from underwater domain awareness (UDA) and underwater systems to maritime security; the Blue Economy; revolution and shift; climate resilience; and coastal security have been addressed in a highly thoughtful manner. With an abiding interest in all dimensions of the Blue Economy, the contributors have successfully packed the handbook with the latest research and analyses to benefit readers. Recommendations made in this volume merit close consideration by policymakers.

Rajiv Bhatia, Distinguished Fellow at the Gateway House, is a former Ambassador with extensive diplomatic experience in several Indian Ocean capitals.

भारत के समुद्री दृष्टिकोण की ऐतिहासिक नींव

- समुद्रों के साथ भारत का सभ्यतागत जुड़ाव प्राचीन और मध्ययुगीन काल से है, जब भारतीय नाविक और व्यापारी पूर्वी अफ्रीका, पश्चिम एशिया और दक्षिण पूर्व एशिया को जोड़ते थे।
- चोल और बाद में मराठों जैसे समुद्री राजवंशों ने प्रारंभिक नौसैनिक शक्ति और विदेशी प्रभाव का प्रदर्शन किया।

- केएम पणिक्कर जैसे रणनीतिक विचारकों ने इस बात पर प्रकाश डाला कि हिंद महासागर का नियंत्रण भारत के व्यापार और संप्रभुता के लिए महत्वपूर्ण है, जैसा कि जवाहरलाल नेहरू ने भी प्रतिध्वनित किया।
- आईएनएसवी कौंडिन्य की यात्रा का प्रतीक पारंपरिक समुद्री विरासत का पुनरुद्धार, भारत के अतीत और वर्तमान समुद्री चेतना के बीच निरंतरता को दर्शाता है।

भारत की समुद्री रणनीति का विकास

तटीय रक्षा से लेकर नीले पानी की क्षमता तक

- भारतीय नौसेना एक ब्लू-वाटर नेवी के रूप में विकसित हुई है, जो पूरे हिंद महासागर क्षेत्र में निरंतर संचालन करने में सक्षम है।
- 2000 के दशक की शुरुआत में अरब सागर में समुद्री डकैती विरोधी अभियानों ने भारत के शुद्ध सुरक्षा प्रदाता के रूप में उभरने को चिह्नित किया।

समुद्री कूटनीति और क्षेत्रीय जुड़ाव

- भारत ने अधिकांश पड़ोसियों के साथ समुद्री सीमाओं को तय किया है, जिससे नियम-आधारित समुद्री शासन को मजबूत किया गया है।
- ऑस्ट्रेलिया, जापान, फ्रांस और आसियान देशों के साथ रणनीतिक साझेदारी हिंद-प्रशांत क्षेत्र में सहकारी सुरक्षा के लिए भारत की प्रतिबद्धता को रेखांकित करती है।

रणनीतिक प्रतिस्पर्धा का प्रबंधन

- चीन की बढ़ती समुद्री उपस्थिति और बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव (बीआरआई) जैसी पहल दक्षिण एशिया में शासन और संप्रभुता की चुनौतियां पेश करती हैं।
- भारत का दृष्टिकोण संवाद के साथ निवारण को संतुलित करता है, शून्य-राशि वाली समुद्री प्रतिद्वंद्विता से बचने के लिए परामर्शी तंत्र की वकालत करता है।

इंडो-पैसिफिक और पावर प्रोजेक्शन

- इंडो-पैसिफिक फ्रेमवर्क को भारत का समर्थन एक स्वतंत्र, खुली और समावेशी समुद्री व्यवस्था में उसकी रुचि को दर्शाता है।
- नौसेना अभ्यास, बंदरगाह पहुंच समझौते और लॉजिस्टिक्स-साझाकरण व्यवस्था समान विचारधारा वाली शक्तियों के साथ पारस्परिकता को बढ़ाती है।
- हालांकि, वैश्विक प्राथमिकताओं को बदलने और अमेरिकी रणनीतियों को विकसित करने के लिए भारत के हिंद-प्रशांत दृष्टिकोण के समय-समय पर पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता होती है।

आर्थिक और तकनीकी आयाम

- नीली अर्थव्यवस्था: विकास, आजीविका और पारिस्थितिक संतुलन के लिए समुद्री संसाधनों के सतत उपयोग पर ध्यान केंद्रित करना।
- समुद्री प्रौद्योगिकी: पानी के नीचे डोमेन जागरूकता (यूडीए), तटीय निगरानी और उन्नत नौसैनिक प्लेटफार्मों पर जोर।

- जलवायु और तटीय सुरक्षा: समुद्र का बढ़ता स्तर, चरम मौसम की घटनाएं और तटीय कमजोरियां एकीकृत समुद्री शासन की मांग करती हैं।

आगे की चुनौतियाँ

- हिंद महासागर क्षेत्र में सहकारी सुरक्षा के साथ रणनीतिक प्रतिस्पर्धा को संतुलित करना।
- ऋण निर्भरता और शासन घाटे का मुकाबला करने के लिए हिंद महासागर के छोटे राज्यों के बीच समुद्री शासन को मजबूत करना।
- आर्थिक, पर्यावरणीय और सुरक्षा प्राथमिकताओं को एक सामंजस्यपूर्ण समुद्री नीति में एकीकृत करना।

निष्कर्ष

भारत की समुद्री नीति में एक निर्णायक परिवर्तन आया है - ऐतिहासिक व्यापार संबंधों से लेकर सुरक्षा, कूटनीति, अर्थव्यवस्था और प्रौद्योगिकी को शामिल करने वाली एक व्यापक भव्य रणनीति तक। जैसे-जैसे भारत की वैश्विक छवि बढ़ेगी, समुद्री क्षेत्र इसकी रणनीतिक स्वायत्तता और अंतर्राष्ट्रीय प्रभाव को तेजी से आकार देगा। आगे का रास्ता क्षेत्रीय साझेदारी को गहरा करने, समुद्री क्षमताओं में निवेश करने, एक स्थायी नीली अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने और हिंद महासागर और हिंद-प्रशांत क्षेत्र में नियम-आधारित व्यवस्था को बनाए रखने में निहित है। भारत के लिए, समुद्र अब केवल वाणिज्य के मार्ग नहीं हैं, बल्कि राष्ट्रीय शक्ति और वैश्विक जुड़ाव के महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं।

यूपीएससी प्रीलिम्स परीक्षा अभ्यास प्रश्न

प्रश्न : निम्नलिखित में से कौन 'ब्लू इकोनॉमी' की अवधारणा को सबसे अच्छी तरह से समझाता है?

- समुद्री जैव विविधता संरक्षण पर विशेष ध्यान
- आर्थिक विकास, आजीविका और पर्यावरणीय स्वास्थ्य के लिए समुद्री संसाधनों का सतत उपयोग
- समुद्री क्षेत्रों का सैन्यीकरण
- केवल समुद्री खनिजों का दोहन

उत्तर : b)

यूपीएससी मुख्य परीक्षा अभ्यास प्रश्न

प्रश्न : भारत की समुद्री परंपराएं औपनिवेशिक शासन से पहले की हैं और इसकी सभ्यतागत पहुंच को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्राचीन और मध्यकालीन भारत के संदर्भ में चर्चा कीजिए।

Faster is not fairer in POCSO case clearance numbers

India crossed a much-publicised milestone in 2025 – fast track special courts cleared more child sexual offence cases than registered that year under the Protection of Children from Sexual Offences (POCSO) Act. They recorded a 109% disposal rate and closed 87,754 cases against the 80,320 registered.

Commentaries have hailed this as a turning point in the fight against child sexual abuse, by suggesting that courts have finally broken the backlog. However, new data and field reports point to a different tipping point where disposals rise but convictions fall and thousands of children remain stuck in long trials with little support.

The POCSO Act, passed in 2012, was designed as a special law because earlier provisions on rape and molestation under the Indian Penal Code and women's protection laws failed to recognise the particular nature of offences against children. POCSO promised child-friendly procedures, time-bound trials and a system that would see and hear children differently from adult survivors.

More courts but convictions fall short
India now runs 773 fast track special courts, 400



Rahul Verma
is a sociologist and independent researcher who writes on education, labour and social inequality in India

New data and field reports show that thousands of children and their families still face long trials with little support

of them designated for POCSO cases. Fast track special courts started in October 2019 with ₹1,952 crore from the Nirbhaya Fund after orders by the Supreme Court of India. And these courts cleared 3,50,685 cases by September 2025. These courts handle 9.51 cases a month compared to 3.26 in regular courts. Even so, convictions and child support still fall short.

Convictions have actually gone down from 35% back in 2019 to 29% across the country by 2023. If we take the baseline figure of 35% in 2019, a 90% disposal rate in 2023 would mean that conviction should have risen to 45%. But it is 29% instead, which is 16 points lower and 36% short of what should be expected. The bottom line is that clearing cases faster means weaker convictions, not better justice. Fast track courts average just 19%. In a number of States, there are more accused walking free than being put behind bars. Tens of thousands of cases drag on for years.

Children who testify in POCSO cases have particular needs that go beyond quick hearings and formal compliance with the law. They require trained support persons, sensitive police and lawyers, and child welfare committees that can secure compensation and care while the trial is ongoing, not years later. When these protections remain on paper, higher disposal rates coexist with fragile convictions, thin reparations and children who leave the system more harmed than healed.

But the trend reveals a darker truth (Table): Faster trials have not meant fairer verdicts. Investigations remain hurried, charge sheets stay incomplete and forensic reports are delayed, especially in overcrowded courts across Uttar Pradesh and Maharashtra.

The enforcement gap also extends to support persons appointed under Section 39 of the POCSO Act, mandated by the Supreme Court in 2021 in all cases, and detailed in the National Commission for Protection of Child Rights 2024 guidelines. The support persons guide children through the long and complex justice-seeking process but as several States have still to empanel them, this results in cases collapsing pre-trial. Practical fixes exist. Right to Information (RTI)-based tracking of support persons, strict lab-report deadlines, case bundling for older files and quarterly conviction audits to focus attention

on weak States. In Madhya Pradesh, special courts that sped up forensics and testimony have secured convictions where similar cases elsewhere failed.

PLVs, the missing first line of defence
The Supreme Court, in December 2025, directed para-legal volunteers (PLV) to be appointed at every police station for POCSO cases. The status report highlights gaps. Andhra Pradesh, for instance, has PLVs in 42 of 919 stations, while Tamil Nadu has none across 1,577. Without PLVs, families walk into police stations alone, scared, pressured and ignored. In the Unnao rape case (Uttar Pradesh), several news reports pointed to the initial reluctance by the police to register the case, as it sat on her first information report (FIR) for a few weeks while threatening her family to drop it. In Lalitpur (Uttar Pradesh) in 2022, a 13-year-old gang-rape survivor was assaulted again at the police station and the FIR was registered only after the intervention of a non-governmental organisation. The presence of a PLV could have stopped the threats, ensured the filing of the FIR the same day and protection of the evidence and the family.

There have been occasions when courts have acquitted the accused when they offered to marry the survivors once they turned adult. The higher judiciary has let off convicts citing 'happy marriage' despite Section 6 convictions against the perpetrator. Such rulings push vulnerable girls into life-long ties with their abusers.

Courts can order interim compensation at any stage, particularly where schooling or health is at risk, but most prefer to wait for final verdicts. By then the harm done to a child's education and family income is often irreversible. Many survivors receive the first instalment years after a judgment, which has seen High Courts pulling up legal aid authorities repeatedly for delays. The Vidhi Centre notes that in such instances, these payments lose their purpose.

Marginalised families borrow money for travel and lawyers. And they often spend more on survival than what state relief provides. Daily wage families lose work for hearings and mothers leave jobs in order to attend court. Speed without support leaves children more broken than justice served.

Disposals up, convictions down

The trend of faster case disposals raises questions about investigative capacity, forensic delays and support systems for children

Year-wise disposal and conviction data (2019-25)

Year	Disposal rate /Case resolution	Conviction rate
2019	10.8% of total pending trials completed	34.9% (National average, NCRB*)
2020	5.0% (Sharp decline due to COVID-19 lockdowns and court closures)	39.6% (Temporary spike reported during pandemic year)
2021	71% (67,734 cases disposed of out of 95,238 registered)	32.2% (Resumption of declining trend)
2022	88% (97,616 cases disposed of out of 1,11,357 registered)	~30% (National trend; variations reported across studies)
2023	90% (1,06,919 cases disposed of out of 1,19,016 registered)	29% (National average, NCRB)
2024	87% (1,06,982 cases disposed of out of 1,22,500 registered)	19% (Fast track special courts; ~81% acquittals)
2025	109% (87,754 cases disposed of against 80,320 registered)	Conviction outcomes uneven; State-wise variation remains high

(Sources: National Judicial Data Grid via Lok Sabha Q.1018; *National Crime Records Bureau Crime in India 2019-2023)

जीएस पेपर II: शासन

संघ लोक सेवा आयोग मुख्य अभ्यास प्रश्न : बाल उत्तरजीवियों के लिए न्याय तक पहुंच को मजबूत करने में सहायक व्यक्तियों और पैरा-लीगल स्वयंसेवकों की भूमिका पर चर्चा करें। उनका कार्यान्वयन कमजोर क्यों रहा है? (150 शब्द)

संदर्भ :

भारत ने 2025 में एक प्रतीकात्मक मील का पत्थर पार किया जब फास्ट ट्रैक विशेष अदालतों ने यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम, 2012 (POCSO) के तहत मामलों में 109% निपटान दर दर्ज की - उस वर्ष दर्ज किए गए मामलों की तुलना में अधिक मामलों का निपटारा किया। हालांकि इस उपलब्धि को बाल यौन शोषण से निपटने में एक सफलता के रूप में पेश किया गया है, उभरते आंकड़ों से एक परेशान विरोधाभास का पता चलता है: तेजी से मामले के निपटान ने निष्पक्ष परिणामों या मजबूत बाल संरक्षण में अनुवाद नहीं किया है। दोषसिद्धि दर में गिरावट, कमजोर समर्थन प्रणाली और प्रक्रियात्मक चूक न्याय की गुणवत्ता के बारे में बुनियादी सवाल उठाती हैं।

प्रमुख मुद्दों पर प्रकाश डाला गया**1. न्याय के बिना गति**

- फास्ट ट्रैक विशेष अदालतें नियमित अदालतों की तुलना में प्रति माह लगभग तीन गुना अधिक मामलों का निपटारा करती हैं।
- हालांकि, फास्ट ट्रैक अदालतों में दोषसिद्धि दर 35% (2019) से गिरकर 29% (2023) हो गई है, और इससे भी कम (लगभग 19%) हो गई है।
- यह जल्दबाजी में की गई जांच, अधूरी चार्जशीट, विलंबित फोरेंसिक रिपोर्ट और कमजोर अभियोजन को इंगित करता है।

2. बाल-केंद्रित सुरक्षा उपायों का क्षरण

- पॉक्सो ने बच्चों के अनुकूल प्रक्रियाओं, समयबद्ध परीक्षणों और मनोसामाजिक देखभाल की परिकल्पना की है।
- व्यवहार में, बच्चों को अक्सर बार-बार गवाही, परामर्श की कमी, विलंबित मुआवजे और न्यूनतम पुनर्वास सहायता का सामना करना पड़ता है।
- अनिवार्य सहायक व्यक्ति (धारा 39, पॉक्सो) - भारत के सर्वोच्च न्यायालय के निर्देशों द्वारा प्रबलित - कई राज्यों में अनुपस्थित या खराब तरीके से लागू किए जाते हैं, जिससे मामले मुकदमे से पहले ही ध्वस्त हो जाते हैं।

3. संपर्क के पहले बिंदु पर संस्थागत अंतराल

- हर पुलिस स्टेशन में पैरा-लीगल वॉलंटियर्स (पीएलवी) नियुक्त करने के सुप्रीम कोर्ट के 2025 के निर्देश को खराब तरीके से लागू किया गया है।
- पीएलवी की अनुपस्थिति से बच्चे लोगों और परिवारों को धमकी, देरी से एफआईआर और सबूतों से छेड़छाड़ का खतरा होता है, खासकर हाशिए के क्षेत्रों में।

4. मुआवजे और पुनर्वास में देरी

- हालांकि अदालतें अंतरिम मुआवजा दे सकती हैं, अधिकांश अंतिम निर्णय तक प्रतीक्षा करते हैं - अक्सर वर्षों बाद।

Young love**POCSO Act must not allow parental pushback against adolescents**

In January 9, the Supreme Court formally acknowledged an issue that legal scholars, child rights experts, and young adults in consensual relationships have long voiced: the menace of the POCSO Act being weaponised by families to punish young persons, but especially young men in romantic relationships with young women. The intervention validates years of alarm over how a statute designed to shield against predatory violence has been subverted into enforcing parental authority and traditional social boundaries. The systemic vulnerability lies within the Act's inflexible architecture. Scholars have argued that by establishing a rigid age of consent at 18 years and applying strict liability, in which the minor person's consent is rendered legally irrelevant, POCSO casts an indiscriminate net on those it deems to be offenders. Together with its stringent provisions and mandatory minimum sentences, which are intended to deter heinous offenders, the Act is easily manipulated by disapproving families. In cases of elopement crossing caste or religious lines, parents often file charges of kidnapping and sexual assault; this triggers the Act if the woman is under 18. As a result, in the current framework, a consensual adolescent relationship is hard to distinguish from coercive abuse, allowing families to use the state's punitive machinery against partners they consider unsuitable.

The Law Commission of India documented this gap in a 2023 report, in the course of advising against lowering the general age of consent from 18, citing dangers such as trafficking and child marriage. It also highlighted that treating two teenagers being close together with the severity reserved for predatory abuse is developmentally counterproductive, and recommended introducing "guided judicial discretion" in sentencing in cases involving adolescents aged 16-18. Likewise, the Court has ordered that its January 9 judgment be shared with the Law Secretary to endeavour to "curb this menace". However, the crisis is made worse by the absence of interventions that are not punitive. When young adults find their personal autonomy at odds with their families' expectations, they are often left isolated; the problem begins here. There is a lack of confidential counselling services for adolescents navigating relationships and emerging sexuality. Resources to mediate with families struggling with these intergenerational transitions are also virtually non-existent outside of traditional, often conservative, community structures. Until the state invests in bolstering these social services, prioritising education and counselling over invoking a response led by the police, and tweaking the Act to admit this recourse, the legal system will leave young couples vulnerable to familial wrath and prosecutorial overreach.

- तब तक, शिक्षा, स्वास्थ्य और आजीविका को नुकसान अपूरणीय हो जाता है, जिससे पीड़ित मुआवजा योजनाओं के पुनर्स्थापनात्मक इरादे को कमजोर कर दिया जाता है।

किशोर संबंधों में POCs का दुरुपयोग

- अदालतों ने तेजी से स्वीकार किया है कि पॉक्सो को परिवारों द्वारा सहमति से किशोर संबंधों के खिलाफ हथियार बनाया जा रहा है, खासकर जाति या धार्मिक आधार से भागने के मामलों में।
- अधिनियम का सख्त दायित्व ढांचा और सहमति की कठोर उम्र 16-18 वर्ष की आयु के किशोरों के बीच शोषण को सहमति से अंतरंगता से अलग करना मुश्किल बना देती है।
- जबकि संसद ने सहमति की उम्र कम करने से इनकार कर दिया है, विशेषज्ञ निकायों ने निर्देशित न्यायिक विवेक और परामर्श और मध्यस्थता जैसे गैर-दंडात्मक हस्तक्षेप की सिफारिश की है।

शासन और न्याय के लिए व्यापक निहितार्थ

- कानून का शासन: उचित प्रक्रिया के बिना उच्च निपटान दर न्याय प्रणाली में विश्वास को खोखला करने का जोखिम उठाती है।
- बाल अधिकार: न्याय जो उत्तरजीवी कल्याण पर संख्यात्मक दक्षता को प्राथमिकता देता है, गरिमा और सुरक्षा के संवैधानिक मूल्यों का खंडन करता है।
- संघीय क्षमता: राज्यों में असमान कार्यान्वयन प्रशासनिक और संस्थागत कमजोरियों को उजागर करता है।

आगे की राह

- मामले के निपटान के लक्ष्यों से दोषसिद्धि की गुणवत्ता और उत्तरजीवी सहायता पर ध्यान केंद्रित करें।
- सहायक व्यक्तियों और पीएलवी की अनिवार्य नियुक्ति और निगरानी लागू करें।
- समयबद्ध फॉरेंसिक रिपोर्टिंग और जांच ऑडिट।
- परामर्श और सामाजिक सहायता सेवाओं के साथ-साथ किशोर सहमति के मामलों के लिए संकीर्ण रूप से तैयार किए गए न्यायिक विवेक का परिचय दें।
- परीक्षणों के दौरान अंतरिम मुआवजे और पुनर्वास तंत्र को मजबूत करना।

निष्कर्ष

पॉक्सो फास्ट ट्रैक अदालतों का अनुभव दर्शाता है कि गति न्याय का विकल्प नहीं है। जबकि बैकलॉग को साफ़ करना आवश्यक है, बच्चों के लिए न्याय के लिए मजबूत जांच, संवेदनशील प्रक्रियाओं, संस्थागत समर्थन और सार्थक पुनर्वास की आवश्यकता होती है। इनके बिना, तेजी से निपटान एक सांख्यिकीय भ्रम बनने का जोखिम उठाता है - कमजोर विश्वासों को छिपाना और बचे लोगों को संरक्षित से अधिक कमजोर छोड़ना। यदि पॉक्सो को भारत के बच्चों की सुरक्षा के अपने मूल वादे को पूरा करना है तो संख्यात्मक दक्षता से बाल-केंद्रित न्याय वितरण में बदलाव आवश्यक है।